सामाजिक न्याय में डॉ0 भीम राव अम्बेडकर की भूमिका

डॉ. प्रियंका चक्रवर्ती
सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान
षासकीय स्नातक महाविद्यालय नैनपुर
जिला –मण्डला (म0प्र0)

जो लोग समाजवादी साहित्य से परिचित रहे हैं और जिन लोगों का सम्बन्ध समाजवादी कार्यक्रम स्वीकार करने वाले राजनैतिक दलों से रहा है, उनके लिए सामाजिक न्याय एक अपरिचित शब्द नहीं है। सामाजिक न्याय का विस्तृत अर्थ है–मानवता का कल्याण। यह एक ऐसा शब्द है जो हर उस व्यक्ति को स्वीकार्य है जो यह विश्वास करता है कि अन्याय, जुल्म, शोषण का विरोध होना चाहिए, चाहे वह समाज के किसी भी क्षेत्र से संबंधित हो। अतः सामाजिक न्याय का मूलमंत्र है सभी मनुष्य समान है और सबको सम्मान पूर्वक जीवन जीने का अधिकार है। समाज की तरफ से प्रत्येक व्यक्ति केा आगे बढ़ते और प्रगति करने का समान अवसर मिलना चहिए किसी वर्ग विशेष का शोषण एवं अधिकार हनन नहीं होना चाहिए। सबको स्वेच्छा से अपनी जीविकोपार्जन का साधन चुनने एवं अपना सर्वांगीण विकास करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में कुछ शब्दों का प्रयोग किया गया है, जिसमें ''समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता'' प्राप्त कराने का आश्वासन दिया गया है और यह उद्देश्य केवल प्रस्तावना में ही नहीं है बल्कि संविधान के नीति–निर्देशक तत्व संबंधी अध्याय के अनुच्छेद–38 और 46 में विशेष रूप से और अन्य अनुच्छेदों में व्याख्या के रूप में वर्णित है।

संविधान सभा में संविधान के प्रारूप पर चर्चा प्रारंभ हुई तो डॉ0 अम्बेडकर ने इस अध्याय के महत्व और उसकी विशेषता बताते हुए 4 नवम्बर, 1948 को अपने भाषण में कहा था ''संविधान के प्रारूप में मूल अधिकारों के बाद वे आते हैं जिन्हें राज्य के नीति–निर्देशक तत्व कहा गया है। संसदीय लोकतंत्र के लिए बनाए गए संविधान में यह एक नई विशेषता है। संसदीय लोकतंत्र के लिए बनाया गया एक ही ऐसा अन्य संविधान है जहाँ ये सिद्धान्त सम्मिलित किये गये हैं और वह आयरिश फ्री स्टेट का है।'' इन सिद्धान्तों की आलोचना का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि यह कहा जाता है कि निर्देशक सिद्धान्तों के पीछे कोई कानूनी बल नहीं है। मैं इसे स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूँ लेकिन मैं यह स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ कि इसके कारण उनकी कोई बाध्यता नहीं है, न मैं यह स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ कि चूकि उनकी कानूनी बाध्यता नहीं है इसलिए वे बेकार हैं।.....उन्होंने भाषण के अन्त में कहा था कि लोकतंत्र में जो भी सता प्राप्त करेगा उसे इन तत्वों का सम्मान करना पड़ेगा। उसे इन्हें भंग करने के बारे में किसी अदालत में भले ही जवाब न देना पड़े, पर चुनाव के समय उसे मतदाताओं के समक्ष इसके लिए जवाब देना पड़ेगा। इन निर्देशक सिद्धान्तों का कितना महत्व है इसका ठीक–ठीक मूल्यांकन उस समय होगा जब दक्षिण पंथी शक्तियाँ सत्ता का अपने कब्जे में करने का प्रयास करेंगी।

चाण्डी के0 टी0 ने सामाजिक न्याय को परिभाषित करते हुए लिखा है कि–''सामाजिक न्याय का अर्थ है–समाज के सभी व्यक्तियों को अपने जीवन अस्तित्व को बनाये रखने तथा व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए अवसर की समानता प्राप्त हो।'' अर्थात व्यक्ति को जीवित रहने के लिए उसकी बुनियादी आवश्यकताओं–भोजन, वस्त्र एवं आवास की पूर्ति होना आवश्यक है।

स्वतंत्र भारत के संविधान में स्वतंत्रता, समानता और सामाजिक न्याय के आधार पर नवीन समाज की इमारत बनाने की परिकल्पना की गयी। संविधान में जन्म, आयु, लिंग, व्यवसाय का चयन, अन्तरजातीय–विवाह सम्बन्धी भेदों एवं बाध्यताओं को समाप्त कर भारत के परम्परागत व्यवस्था–जाति तंत्र के जन्मगत, व्यावसायिक, आर्थिक एवं सामाजिक आधारों को नष्ट कर दिया गया और इस तरह संविधान में जातीय निषेध को निषिद्ध कर दिया गया। इसी प्रकार जन्मजात राजतंत्र या सामंती व्यवस्था को' पंचायती राज' तथा 'आरक्षण' द्वारा ध्वस्त कर दिया गया और जाति विहीन 'सामाजिक न्याय' की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ। भारत में सामाजिक न्याय' की स्थापना एवं इसके मजबूत स्तम्भ का तरीका अनूठा रहा है जिसका आधार तीन मौलिक मान्यताओं पर टिका हुआ है–

1ण्विधान, जो कि लोकतांत्रिक तरीके से निर्मित हो, के माध्यम से न्यायपूर्ण समाज की स्थापना करना।

2ण्'बिना नागरिक भेद' के धारणा को ध्यान दिये समाज में सदियों से दबे, कुचले एवं पिछड़े तथा नियोग्यताओं से युक्त वर्गो को क्षतिपूर्ति एवं विशेष रक्षोपायो को प्रदान करना।

3ण्क्षतिपूर्ति प्राथमिकता की प्रकृति अस्थायी, अपवाद स्वरूप और सीमित होनी चाहिए, जिससे सामाजिक न्याय के बुनियादी सिद्धान्त समानता के प्रति प्रतिबद्धता का उल्लंधन नहीं हो और न ही यह वर्गीय दबावों के तले साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की पद्धति में परिणत हो सके।

इससे स्पष्ट होता है कि 'सामाजिक न्याय' से स्वतंत्रता को अलग नहीं रखा जा सकता फिर भी यह 'समानता' (मुख्यतः आर्थिक एवं सामाजिक') के अधिक निकट है। वैसे भी सामाजिक न्याय का कोई अर्थ नही रह जाता, जहाँ पर विषमता या असमानता की खाई अधिक हो। इस दृष्टि से सामाजिक न्याय का तात्पर्य है–सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में समानता की स्थापना करना। स्वतंत्रता एवं समानता सामाजिक न्याय के मूलभूत तत्व हैं।

डॉ0 अम्बेडकर ने भारत में सामाजिक न्याय स्थापित करने के लिए अस्पृश्यता, छुआछूत को मिटाना अनिवार्य मानते थे। इस निमित उन्होंने अछूतोद्धार आंदोलन को बल, तीव्र गति एवं नयी दिशा प्रदान

करने के लिए सर्वप्रथम अछूतों के इतिहास का अध्ययन किया। अध्ययनोपरांत डॉ0 अम्बेडकर ने 1920 मे एक सामाजिक संगठन 'वहिष्कृत हितकारिणी सभा' बनाये। लोगों को संगठित कर समझाना शुरू किये। 1925 में बम्बई अस्पृश्य परिषद की स्थापना किये जिसका उद्देश्य स्वरक्षा और अस्पृश्यता उन्मूलन आंदोलन को तीव्र करना था। 'बहिकृत भारत' नामक समाचार पत्र भी निकाले जिसका उद्देश्य अछूतों की आवाज उपर उठाना था। इसी कड़ी में 'मूकनायक' पत्र भी प्रकाशित किये।

डॉ0 अम्बेडकर ने मालवण गॉव की सभा में बोलते हुए उन्होनें कहा कि 'यदि तुम जीना चाहते हो तो जिन्दा दिली के साथ जिओं। इस देश में जो अन्य नागरिकों को अन्न, वस्त्र और मकान की सुविधॉए उपलब्ध हैं तुम्हें भी प्राप्त होनी चाहिए। यह तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है। इन मानवीय अधिकारों को प्राप्त करने के लिए तुम्हें ही आगे आना होगा और संगठित होकर कार्य करना होगा।

भारतीय समाज में व्याप्त अस्पृश्यता को डॉ0 अम्बेडकर दास प्रथा से भी बुरा मानते थे–अस्पृश्यता और दास प्रथा में अंतर है, जिससे अस्पृश्यता एक परतंत्र सामाजिक व्यवस्था की सबसे खराब मिसाल बन जाती है। दास प्रथा कभी बाध्यकारी नहीं थी किन्तु अस्पृश्यता बाध्यकारी है। कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को अपने दास के रूप मे रख सकता है। उस पर ऐसी कोई बाध्यता नहीं है कि वह नहीं चाहने पर भी रखे किन्तु अछुत के पास कोई विकल्प नहीं है। एक अछूत के रूप में पैदा होने पर अछूत की सारी अयोग्यताऍ उसे मिल जाती है। दास प्रथा को कानून छुटकारे की इजाजत देता है। एक बार का गुलाम, हमेशा गुलाम–यह गुलाम की नियति नहीं थी। अस्पृश्यता से बच निकलने का कोई रास्ता नही। एक बार अछूत, हमेशा अछूत ''इस प्रकार डॉ0 अम्बेडकर दास प्रथा को अस्पृश्यता से सौगुना बेहतर मानते थे।

डॉ0 भीम राव अम्बेडकर ने लिखा है कि ''हम कुछ विश्वास के साथ कह सकते है अस्पृश्यता की उत्पति ईसा की मृत्यु के 400 वर्ष बाद हुई। इसकी उत्पति ब्राहम्णवाद एवं बौद्ध धर्म में प्रभुता की लड़ाई के लिए जो संघर्ष हुआ उसके कारण हुई जिसने भारत के इतिहास को पूर्ण रूप से बदल दिया तथा भारतीय इतिहास के छात्रों ने इस पर अध्ययन करने की जरूरत नहीं समझी और इसे तिरस्कृत किया। डॉ0 अम्बेडकर ने जो सामाजिक न्याय का स्वपन देखा था वह दलित वर्ग का उत्थान था।

आज दलित वर्ग के सन्दर्भ में सामाजिक न्याय पर विचार करें तो यह केवल आरक्षण तक सीमित हो गया है। सामाजिक न्याय लाने में आरक्षण की नीति एक शुरूआत हो सकती है। परन्तु दलितों का सम्पूर्ण उत्थान इससे नहीं हो सकता। यदि हम दलितों का उत्थान चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि समाज में सामाजिक न्याय की स्थापना उसमें मौलिक अर्थ में हो और हम निः स्वार्थ भाव से इसकी रचनात्मक सुधार करें, समानता और भाईचारे की भावना विकसित करें। डॉ0 अम्बेडकर का विचार था कि समाज में पिछड़े व शोषितों के साथ उस प्रकार का व्यवहार किया जाये कि उन्हें सामाजिक उपेक्षा का शिकार न होना पड़े।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत में सामाजिक न्याय स्थापित करने के लिए डॉ0 भीमराव अम्बेडकर आजीवन संघर्ष करते रहे। सामाजिक अन्याय को स्वयं उन्होंने भोगा था। उन्हें इसका कटु अनुभव था। इसलिए जब उनको भारतीय संविधान सभा के प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया तो संविधान तैयारी की सारी जिम्मेवारी (प्रारूप) संभालते हुए भारत में सामाजिक न्याय स्थापित करने का पूरा प्रयास कानून बनाकर किये।

डॉ0 अम्बेडकर सामाजिक न्याय स्थापित करने के लिए छुआछूत को मिटाने के लिए दृढ़ निश्चय कर लिये थे कि–''मैं भारतीय समाज के इस कोढ़, इस अछूतपन को समूल रूप से मिटाने के लिए जीवन भर संघर्ष करूँगा और इसके लिए कोई भी सरकारी अथवा अर्द्धसरकारी नौकरी ग्रहण नहीं करूगा। मेरे लोगों के साथ जो अपमानजनक, असम्मानित अमानवीय और अधार्मिक अचारण होता है उसे मिटाने का भरसक प्रयत्न करूँगा।''भारत में सामाजिक न्याय के लिए इनके पहले इतना अधिक व्यवस्थित प्रयास किसी में नहीं किया। सामाजिक न्याय स्थापित करने में डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के प्रयास इतिहास के स्वर्णिम अक्षरों में लिखे जायेंगे जो काफी सराहनीय है।

संदर्भ

ख1, 1ण्सामाजिक न्याय एवं दलित वर्ग, डॉ0 मालिनी वर्मा।

ख2, 2ण्सामाजिक न्याय और भारतीय संविधान, परीक्षा मंथन सामयिक निबंध भाग–1

ख3, 3ण्भारत में सामाजिक न्याय–एक अवधारणात्मक विवेचना, श्री मती वंदना ओझा, ज्ञानदायिनी समाज विज्ञान शोध पत्रिका, अंक–1, वर्ष –2011

ख4, 4ण्सामाजिक न्याय में डॉ0 भीमराव अम्बेडकर की भूमिका, डॉ0 ओम प्रकाश भारतीय, परमिता, जनवरी–मार्च 2009

ख5, 5ण्योजना, मानवाधिकार और सामाजिक न्याय (विशेषांक) अप्रैल, 2011